REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 9 | JUNE - 2018

पूर्व मध्यकालीन मिथिला में कृषिक अर्थव्यवस्था

अनिल प्रसाद सिंह
शोधार्थी, इतिहास विभाग,
ल0ना0मिथिला विश्वविद्यालय,दरभंगा

सारः

मिथिला प्राचीन काल से ही एक कृषि प्रधान–क्षेत्र रहा है। जलौढ़ मिट्टी की बहुलता एवं समतल मैदानी भाग ने कृषि के लिए सदैव अनुकूल परिस्थिति का निर्माण किया है। अनुकूल परिस्थिति के फलस्वरूप यहाँ बड़े पैमाने पर कृषि से संबंधित उत्पादों की बहुलता रही है। खरीफ, रबी एवं भदई फसल के रूप में विभिन्न फसलों का उत्पादन विभिन्न मौसमों में होता रहा है। खाद्य फसल के रूप में धान, गेहूँ, मक्का, मटर, जौ, तीसी, मडुआ इत्यादि फसलों का उत्पादन होता रहा है। धान यहाँ बड़े पैमाने पर उपजाया जाता रहा है। सब्जियाँ और रेशेदार फसल के अलावा फल भी यहाँ उपजाये जाते रहे हैं। पूर्व मध्यकालीन मिथिला में उपर्युक्त सभी तरह के फसलों का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता था। राजा के द्वारा भी प्रजा को कृषि कार्य में सहायता प्रदान की जाती थी। सिंचाई की व्यवस्था करना राजा का दायित्व माना जाता था। कृषि के साथ–साथ पशुपालन भी मिथिला में पचलित था। पूर्व मध्यकालीन मिथिला में कृषि से संबंधित इन सारे तथ्यों का विश्लेषण प्रस्तुत अध्याय में किया गया है।

प्रस्तावनाः

प्राचीन युग से अर्वाचीन युग तक मिथिला का प्रमुख धंधा कृषि रहा है। यहाँ की आर्थिक व्यवस्था प्राचीन काल से अद्यपर्यन्त कृषि पर आधारित रहा है। यहाँ की भूमि काफी उर्वरा है। हिमालय से गंगा, गंड़क, से महानन्दा तक विस्तृत मिथिला की भूमि पृथ्वी का नव निर्मित भू–भाग माना जाता है। इस भाग का निर्माण प्रायः पाँच लाख वर्ष पूर्व हुआ था। उससे पूर्व हिमालय और विन्ध्याचल के मध्य समुद्र था। हिमालय से निःसृत होनेवाली नदियों के द्वारा अपने स्रोत के साथ मिट्टी लाकर भरने के कारण इस भाग का निर्माण हुआ।[1]

अतएव नदी मातृक एवं देवमातृक उभय विद्य रहने के कारण मिथिला के वसुधा की उर्वरता सम्पूर्ण भारत में विश्रुत है। कृषि की महत्ता प्राचीन काल से ही निर्विवादित रहो है। न केवल मिथिला अपितु भारत की मान्यता ही कृषि प्रधान देश के रूप में रही है और आज भी है। ऋग्वेद में भी कहा गया है कि कृषि से ही सम्पत्ति यहाँ तक कि पत्नी की प्राप्ति होती है।[2] अमरकोष तो कृषि को जीवन का पर्यायवाची मानता है।[3] जहाँ तक मिथिला में कषि की स्थिति का प्रश्न है, यहाँ बड़े पैमाने पर धान की खेती के कारण सघन जनसंख्या का घनत्व बढ़ा हुआ था। प्रारंभिक दौर से ही जंगलों की कटाई के चलते कृषि क्षेत्र का विस्तार हो चुका था। आर्थिक प्रगति का यहाँ कोई दूसरा वैकल्पिक साधन भी नहीं था। यहाँ को मिट्टी जलौढ़ रहने के कारण उपजाऊ अधिक थी और आज भी है। प्रो० विजय ठाकुर के विचार में तो सारण का लक्ष्मीगढ़, चम्पारण का चंकीगढ़ तथा लौरिया नन्दनगढ़, मुजफ्फरपुर का चामुण्डागढ़, दरभंगा का कोपगढ़, राजा शिवैसिंहगढ़, सहरसा का कोयागढ़, पूर्णियाँ का असुरगढ, सिकलीगढ़ तथा जलालगढ़, बेगूसराय का नौलागढ़ और जयमंगलागढ़, मुंगेर का शतोगढ़ इत्यादि कृषि क्षेत्र के विस्तार एवं छोटे–छोटे स्थानीय राज्यों के आविर्भाव का परिचायक है।[4]

कृषि शब्द की उत्पत्ति 'कृष' से हुई है जिसका अर्थ है 'जोतना'। यह नाम आर्य विजेताओं द्वारा दिया गया था। कृषि कर्म एक उपयोगी व्यवसाय था तथा यह आर्य और अनार्य के अर्थात् सभ्य और असभ्य के बीच अंतर को भी स्पष्ट करता था।[5] 'क्षत्रपति' शब्द जिसका अर्थ 'भूमि का स्वामी' से लगाया जाता है, स्पष्टतः कृषि

से संबंधित है। कृषि का महत्त्व और इसकी आवश्यकता समय के साथ बढ़ती चली गई जिसका प्रमाण तत्कालीन साहित्य में देखने को मिलता है। महाभारत[6] और मन[7] के अनुसार राजा के आठ महत्त्वपूर्ण कार्यो में एक कार्य 'कृषि' भी था। यह कथन कृषि के महत्ता को सिद्ध करती है। प्राचीन काल में कृषकों को समाज में आदर से देखा जाता था तथा उनके इस कर्म को सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। अर्थशास्त्र[8] में विवरण मिलता है कि कृषि कर्म जीवन जीने का सबसे उत्तम साधन के रूप में माना जाता था। अनाज उपजाने के कारण कृषक काफी सुखी जीवन व्यतीत करते थे। उपज देनेवाली जमीन काफी महत्त्वपूर्ण थी और उसे 'खेत' कहकर बुलाया जाता था। समाज के लोग कृषि के प्रति काफी लगाव रखते थे तथा सामाजिक सौहार्दपूर्ण वातावरण में बुआई पर्व मनाया जाता था। बुआई पर्व प्रतिवर्ष राजा द्वारा हल चलाए जाने के अवसर पर मनाया जाता था। राजा अपने प्रजा जनों के कष्ट को दूर करने हेतु खेतों में हल चलाता था।

मिथिला नरेश जनक ने अकाल से पीड़ित मिथिला भूमि को मुक्त करने हेतु साधुओं के परामर्श पर खेतों में हल चलाया था।[9] कहा जाता है कि राजा जनक द्वारा हल चलाये जाने के उपरान्त वर्षा हुई और अकाल से पीड़ित प्रजाजनों के कष्ट का अंत हुआ। विदेशी यात्रियों द्वारा लिखे गए यात्रा विवरण में कृषि से संबंधित जानकारियाँ उपलब्ध होती है। मेगास्थनीज ने भारतीय समाज को सात वर्गो में बाँटा था। उसमें कृषकों को भी स्थान दिया गया था। मेगास्थनीज वर्णन करता है कि समाज का दूसरा वर्ग जो कि कृषि कार्य से जुड़ा हुआ था उसकी संख्या अन्य वर्गो के लोगों से अधिक थी। ये कृषक समुदाय युद्ध और सार्वजनिक कार्य (जो राज्य से संबंधित लोगों के सेवा से था) से अपने को परे रखकर पूरी तरह से कृषि कार्य में लगे रहते थे। प्राचीन काल के साक्ष्यों से यह पता चलता है कि युद्ध के समय भी दुश्मनों का प्रहार खेत में लगे फसल पर प्रायः नहीं हुआ करता था। अतः किसान युद्ध के समय भी सभी चिंताओं से मुक्त होकर पूर्ण समर्पित भाव से अपने कृषि कार्य में लगे रहते थे। किसान समाज में सबका भला करनेवाला माना जाता था। जो कि सभी घावों से लोगों की रक्षा करता है।

दुश्मनों द्वारा फसल नष्ट न किये जाने और किसानों द्वारा समर्पित भाव से कृषि कर्म से उपज अच्छी होती थी और इससे लोगों की जरूरतें पूरी हुआ करती थी। समाज के लोगों का जीवन अच्छी उपज से सुखमय होता था।[10]

स्टाबा, मेगास्थनीज के कथन का उल्लेख करते हुए लिखता है कि कृषक समुदाय जो कि काफी अधिक संख्या में समाज में विद्यमान थे वे न तो सैनिक सेवा में और न वाणिज्य व्यापार में रूचि लेकर नगरों के शोर गुल से आकर्षित हुआ करते थे। एक ही समय में जबकि राज्य में एक तरफ लगातार युद्ध होते रहते थे और सेना युद्ध के मैदान में होती थी, कृषक सैनिकों के संरक्षण में निडर होकर कृषि कर्म में रत रहती थी। एरियन का कहना है कि किसान उस मिट्टी की तरह होता है जिसमें अन्य महत्त्वपूर्ण वर्गो का जन्म होता है।

अर्थशास्त्र के अन्तर्गत कृषि तंत्र का एक भाग वर्ष आयुर्वेद के वर्णन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मौर्य युग में कृषि विज्ञान को कृषि तंत्र के नाम से जाना जाता था। कौटिल्य चन्द्रगुप्त के समय कृषि के महत्त्व को स्वीकार करते हैं तथा वर्णन करते है कि बी बोते समय मंत्र का उच्चारण फसल रक्षा हेतु होता था।[11]

ऐतिहासिक स्रोतों के अध्ययन से स्पष्टतः यह पता चलता है कि पूर्व मध्यकालीन मिथिला में सम्पूर्ण कृषि व्यवस्था एवं कृषि उत्पादन का ढ़ाँचा 'सातत्य के सिद्धान्त' के अनुरूप ही बना रहा। कृषि क्षेत्र के विस्तार एवं उत्पादन में वृद्धि के लिए प्रयास होते रहे। इसी का प्रतिफल था सिंचाई के संसाधनों का कुछ हद तक विस्तार खेत में खाद डालने की तकनीक का विकास, बीजों का उपचार, मौसम की जानकारी का अनुभव जनित विकास आदि। इन सब तथ्यों के आलोक में मिथिला में कृषि की महत्ता काफी बढ़ी है। इसकी महत्ता का अंदाजा तो महज यहाँ प्रचलित एक लोकोक्ति से ही लगाया जा सकता है–

'उत्तम खेती मध्यम वाण। निकृष्ट चाकरी भीख निदान'। अर्थात् यहाँ के लोग कृषि को जीविकोपार्जन के साधनों में सर्वोत्तम और महत्त्वपूर्ण मानते थे, द्वितीय वाणिज्य को, तृतीय नौकरी को और अंत में भीख माँगने को जिसे घृणास्पद समझा जाता था और आज भी यही मान्यता है।

पूर्व मध्यकालीन मिथिला में सामंतवाद अपनी जड़ मजबूत कर चुका था।[12] सामंतवाद कालीन मिथिला में परम्परागत रूप से कृषि संबंधी केवल दो वर्ग थे–शासक और प्रजा! यदि कोई व्यक्ति किसी जमीन पर प्रजा से कब्जा हासिल करता था तो उसे अपनी उपज का एक हिस्सा शासक को देना पड़ता था और उसके बदले उसे

शासक से सुरक्षा मिलती थी।[13] इस पद्धति के अन्तर्गत भू–स्वामित्व की परिभाषा निर्धारित करना कठिन हो जाता है।

निष्कर्षः

भूमि संबंधी इस मूल और सरल अधिकार के विकास का संबंध छोटे–छोटे राज्यों के बड़े–बड़े साम्राज्यों में मिला लिए जाने की प्रक्रिया से जुड़ा हुआ था। विजेता विजित राजा के स्थान पर प्रतिष्ठित हो जाता था या उसके राज्य पर कब्जा करने के बजाय उस पर कर लाद देता था। पूर्व मध्यकालीन मिथिला में राजनीतिक उथल–पुथल के फलस्वरूप विभिन्न शासकों द्वारा समय–समय पर स्थापित शासन का स्वरूप इसी प्रकार का रहा था। इन दोनों परिस्थितियों में किसानों की हैसियत पर कोई प्रभाव पड़ना जरूरी नहीं था, लेकिन राजनीतिक फेर–बदल का नतीता अक्सर उपज में से राज्य द्वारा मांगे जाने वाले अंश की कमी या वृद्धि राजस्व के निर्धारण उसकी वसूली के तरीकों में परिवर्तन आदि का आ जाना स्वाभाविक था जिसका प्रभाव किसानों की स्थिति पर पड़ता था। मोरलैंड का विचार है कि जोतदार के उदय का श्रेय ऐसे ही परिवर्तनों को है। फिर जमीन पर काबिज होने से ही कानूनी तौर पर उस पर अधिकार मान लिया जाय यह जरूरी नहीं था। राजा को राजस्व की आवश्यकता थी और उसकी जरूरतें पूरी करने के लिए काफी जमीन पर खेती करना या करवाना उसके अधिकार के बजाय उसका कर्त्तव्य माना जाता था। यह परम्परा पूर्वकाल से चली आ रही थी। पूर्ववर्ती काल में भी खेती करन के कर्त्तव्य का पालन सख्ती से करवाया जाता था।

संदर्भ सूचीः–

1. विदेह, चन्द्रधारी मिथिला कॉलेज पत्रिका, 1360 साल, पृ0–35,
   इन्द्रकान्त झा– विद्यापतिकालीन मिथिला, मैथिली अकादमी, पटना, 1986, पृ0–210
2. ऋग्वेद, श्रीपद शर्मा, बम्बई, 1940,×3.13
3. अमरकोष, (संपादक), गणपति शास्त्री, त्रिवेन्द्रम, 1914, 9.91
4. इतिहास (ICHR) अंक–1, भाग–1, पृ0–79
5. आर.सी.दत्त ए हिस्ट्री ऑफ सिविलाईजेशन इन एन्सिएन्ट इंडिया, पृ0–39
6. महाभारत, पूना, 1927 और 1933,II 5.22
7. मनु, (सं0)जे0जौली लंदन 1887, गंगानाथ झा, अंग्रेजी (अनु0), पाँच खंड कलकत्ता, 1922–29,VII,154
8. अर्थशास्त्र, (सं0) उदयवीर शास्त्री, दिल्ली, 1970, 4.11.4.10
9. मो० अकीक, इकोनोमिक हिस्ट्र ऑफ मिथिला, अभिनव पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1974, पृ0–74–75
10. मो० अकीक, उपर्युक्त
11. उपर्युक्त
12. विजय कुमार ठाकुर, ''मिथिला के सामंतवाद'', मिथिला भारती, अंक–4, पृ0–66–75
13. मोरलैंड, अकबर की मृत्यु के समय का भारत, (अनुवादक) सुधा किरण सिन्हा, नई दिल्ली, 1996, पृ0–88